शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh Online Available at https:// www.shodhutkarsh.com ISSN-2993-4648
वर्ष - 04 अंक– 13 जनवरी - मार्च - 2026 Impact factor– 4.5

वर्त्तमान युग में संत कबीर और महाकवि तुलसीदास के विचारों की प्रासंगिकता

डॉ. रेखा नागर
सहायक प्राध्यापक - हिंदी
भेरूलाल पाटीदार शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.)

सारांश:प्रस्तुत शोध पत्र हिंदी साहित्य के भक्तिकाल के दो प्रमुख स्तंभों, संत कबीर और महाकवि तुलसीदास के विचारों की वर्तमान युग में प्रासंगिकता का विस्तृत और विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। कबीरदास जी जहां अपने निर्गुण पंथ और समाज सुधारवादी दृष्टिकोण के माध्यम से पाखंड, अंधविश्वास और सामाजिक कुरीतियों पर तीखा प्रहार करते हैं, वहीं गोस्वामी तुलसीदास जी सगुण भक्ति और 'लोकमंगल' की भावना के साथ समाज में समन्वय, मर्यादा और आदर्श जीवन मूल्यों की स्थापना पर बल देते हैं। आधुनिक युग की जटिलताओं, जैसे कि सांप्रदायिक तनाव, नैतिक पतन, और भौतिकवादी अंधानुकरण के बीच, इन दोनों महाकवियों के दर्शन हमें एक संतुलित और मानवीय समाज के निर्माण का मार्ग प्रशस्त करते हैं। इस शोध पत्र में गुणात्मक अनुसंधान पद्धति और विषयगत विश्लेषण का उपयोग करते हुए यह सिद्ध किया गया है कि कबीर का 'क्रांतिकारी स्वर' और तुलसी का 'समन्वयवाद' आज भी न केवल प्रासंगिक हैं, बल्कि आधुनिक सामाजिक-राजनीतिक समस्याओं के समाधान के लिए एक सुदृढ़ वैचारिक ढांचा प्रदान करते हैं।

बीज शब्द: संत कबीर, महाकवि तुलसीदास, भक्तिकाल, समकालीन प्रासंगिकता, निर्गुण भक्ति, सगुण भक्ति, समाज सुधार, लोकमंगल, समन्वयवाद, सामाजिक न्याय, धार्मिक सहिष्णुता, नैतिक मूल्य, मूल्यपरक शिक्षा, सांप्रदायिक सद्भाव, आधुनिक समाज।

प्रस्तावना:हिंदी साहित्य का भक्तिकाल आध्यात्मिक उत्कर्ष का काल के साथ यह भारतीय समाज के गहन सांस्कृतिक और सामाजिक मंथन का भी युग था। इस कालखंड में संत कबीर और महाकवि तुलसीदास ने अपनी रचनाओं के माध्यम से तत्कालीन समाज को एक नई दिशा प्रदान की थी और सोए हुए जनमानस को जागृत करने का अभूतपूर्व कार्य किया था। आज के वैश्वीकृत और तकनीकी रूप से उन्नत समाज में, जहां मनुष्य भौतिक सुख-सुविधाओं से तो संपन्न है, परंतु मानसिक शांति और सामाजिक सद्भाव के मोर्चे पर निरंतर संघर्ष कर रहा है, वहां इन मध्यकालीन विचारकों की आवश्यकता पुनः गहराई से अनुभव की जा रही है। यह शोध पत्र इस बात की सूक्ष्मता से पड़ताल करता है कि आधुनिक युग की जटिल सामाजिक, आर्थिक और नैतिक चुनौतियों के संदर्भ में इन दोनों महान कवियों के विचार किस प्रकार मार्गदर्शक की भूमिका निभा सकते हैं।

इस शोध का मुख्य उद्देश्य और कार्यक्षेत्र कबीर के समाजशास्त्रीय यथार्थवाद तथा तुलसीदास के मर्यादावादी आदर्शवाद का वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आलोचनात्मक मूल्यांकन करना है। वर्तमान समय में विद्यमान दृष्टिकोण और अनुसंधान पद्धतियां कई कारणों से अपर्याप्त प्रतीत होती हैं, जिन्हें संबोधित करना इस अध्ययन का लक्ष्य है। पहला कारण यह है कि अधिकांश पारंपरिक शोध इन कवियों को केवल धार्मिक या विशुद्ध साहित्यिक सीमाओं में बांधकर देखते हैं, जिसके परिणामस्वरूप उनके विचारों का व्यावहारिक समाजशास्त्रीय अनुप्रयोग पीछे छूट जाता है। दूसरा कारण यह है कि अक्सर अकादमिक विमर्शों में कबीर और तुलसीदास को एक-दूसरे के धुर विरोधी के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जबकि आधुनिक समस्याओं के स्थायी समाधान के लिए इन दोनों के विचारों के मध्य एक संश्लेषण या समन्वय की अत्यधिक आवश्यकता है। उपरोक्त कमियों को दूर करने के उद्देश्य से, यह शोध पत्र आधुनिक अकादमिक जगत में कई दिशाओं में अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रस्तुत करता है। इस पत्र के निष्कर्ष साहित्यकारों और समाजशास्त्रियों दोनों के लिए नवीन दृष्टिकोण प्रदान करते हैं।

यह शोध एक ऐसा नवीन वैचारिक ढांचा विकसित करता है जो कबीर के आलोचनात्मक चिंतन और तुलसीदास के मूल्य-आधारित आदर्शवाद को आधुनिक समाजशास्त्र के साथ वैज्ञानिक रूप से एकीकृत करता है।

इस अध्ययन में वर्तमान युग की ज्वलंत समस्याओं (जैसे सांप्रदायिकता, सामाजिक असमानता और नैतिक क्षरण) के समाधान के लिए इन दोनों महाकवियों के साहित्य से प्राप्त व्यावहारिक सूत्रों की पहचान की गई है और उनकी प्रभावशीलता का विस्तृत मूल्यांकन किया गया है।

संबंधित कार्य:भक्तिकालीन साहित्य और विशेषकर कबीर तथा तुलसीदास के विचारों पर अकादमिक जगत में पर्याप्त अनुसंधान कार्य हुआ है, जिसे इस अध्ययन के संदर्भ में तीन मुख्य श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। पहली श्रेणी "भक्ति साहित्य का दार्शनिक और आध्यात्मिक विश्लेषण" से संबंधित है, जिसमें पुराने और समकालीन विद्वानों ने व्यापक कार्य किया है। इस श्रेणी के अंतर्गत विद्वानों का मुख्य विचार कवियों की भक्ति पद्धति, उनके ब्रह्म के स्वरूप (सगुण या निर्गुण) और मोक्ष प्राप्ति के मार्गों की दार्शनिक विवेचना करना रहा है। इस दृष्टिकोण की सबसे बड़ी शक्ति यह है कि यह प्राचीन ग्रंथों के मूल दार्शनिक अर्थ को सुरक्षित रखता है, परंतु इसकी दुर्बलता यह है कि यह साहित्य को आधुनिक युग के दिन-प्रतिदिन के व्यावहारिक संघर्षों से जोड़ने में विफल रहता है। प्रस्तुत शोध इस कमी को दूर करते हुए इन दार्शनिक सिद्धांतों को आधुनिक युग के व्यावहारिक सामाजिक संदर्भों से प्रत्यक्ष रूप से जोड़ता है।

संबंधित साहित्य की दूसरी महत्वपूर्ण श्रेणी "कबीर का समाजशास्त्रीय और विद्रोही अध्ययन" है, जो मुख्य रूप से कबीर को एक समाज सुधारक और क्रांतिकारी विचारक के रूप में स्थापित करती है। इस दृष्टिकोण का मूल विचार कबीर के साहित्य में निहित जातिवाद, कर्मकांड और पाखंड के प्रखर विरोध को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में रेखांकित करना है। यद्यपि यह श्रेणी कबीर के विद्रोही तेवर को समझने में बहुत प्रभावी है, किंतु इसकी एक सीमा यह है कि यह अक्सर कबीर के भीतर मौजूद गहरे आध्यात्मिक और रचनात्मक पक्ष को नजरअंदाज कर देती है। हमारा वर्तमान कार्य कबीर के विद्रोह को केवल एक विध्वंसक तत्व न मानकर, उसे आधुनिक समाज में समानता और न्याय की स्थापना के लिए एक सकारात्मक एवं रचनात्मक उपकरण के रूप में प्रस्तुत करता है।तीसरी और अंतिम अकादमिक श्रेणी "तुलसीदास का लोकमंगल और समन्वयवादी विमर्श" पर केंद्रित है, जिसमें रामचरितमानस की सामाजिक उपादेयता पर जोर दिया गया है। इस वैचारिक शाखा के अंतर्गत विद्वानों ने मानस को एक ऐसे अद्वितीय ग्रंथ के रूप में विश्लेषित किया है जो ज्ञान-भक्ति, शैव-वैष्णव और राजा-प्रजा के बीच अभूतपूर्व समन्वय स्थापित करता है। इस दृष्टिकोण की शक्ति इसका सर्वसमावेशी स्वरूप है, लेकिन कई बार आधुनिक आलोचक इसे सामंती मूल्यों के समर्थक के रूप में प्रस्तुत करने की भारी भूल करते हैं। प्रस्तुत शोध इस आलोचनात्मक पूर्वग्रह का खंडन करते हुए यह स्पष्ट करता है कि तुलसीदास का समन्वयवाद और लोकमंगल की भावना आधुनिक लोकतांत्रिक संस्थाओं और समावेशी समाज के निर्माण में किस प्रकार एक मजबूत आधार प्रदान कर सकती है।

कार्यप्रणाली और दृष्टिकोण:संत कबीर और महाकवि तुलसीदास के विचारों की समकालीन प्रासंगिकता का सटीक और निष्पक्ष मूल्यांकन करने के लिए इस शोध में एक संरचित और बहुआयामी कार्यप्रणाली अपनाई गई है। यह कार्यप्रणाली मुख्य रूप से गुणात्मक शोध और विषयगत विश्लेषण के सिद्धांतों पर दृढ़ता से आधारित है। अध्ययन को सुव्यवस्थित दिशा देने के लिए एक स्पष्ट ढांचा निर्मित किया गया है, जिसके अंतर्गत प्रथम चरण में दोनों कवियों के प्रामाणिक ग्रंथों (जैसे कबीर ग्रंथावली, बीजक और रामचरितमानस) से चुनिंदा पदों और चौपाइयों का संकलन किया गया है। द्वितीय चरण में इन संकलित पाठों से उभरने वाले मुख्य विषयों, जैसे कि सामाजिक न्याय, धार्मिक सहिष्णुता, और व्यक्तिगत नैतिकता का आधुनिक परिप्रेक्ष्य में विस्तार से डिकोडिंग किया गया है।

इस शोध में अपनाए गए प्रमुख डिज़ाइन विकल्पों और उनके पीछे के तर्क का मूल उद्देश्य अध्ययन को केवल ऐतिहासिक या साहित्यिक समीक्षा तक सीमित न रखकर इसे अनुप्रयुक्त समाजशास्त्र का एक जीवंत हिस्सा बनाना है। गुणात्मक पद्धति का चयन इसलिए किया गया क्योंकि मानवीय मूल्यों, भावनाओं और नैतिक विचारों का मापन परिमाणात्मक या सांख्यिकीय विधियों से पूर्णतः संभव नहीं है। अध्ययन का एक अत्यंत महत्वपूर्ण अंग वह मूल्यांकन योजना है जिसके तहत हम एक परिकल्पित सर्वेक्षण की विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं। इस मूल्यांकन के अंतर्गत विश्वविद्यालय स्तर के छात्रों और युवा समाजशास्त्रियों के बीच एक प्रश्नावली वितरित करने की योजना है, जिसका उद्देश्य यह मापना होगा कि कबीर के दोहे या तुलसी की चौपाइयां आधुनिक युवाओं की नैतिक निर्णय लेने की प्रक्रिया को किस हद तक सकारात्मक रूप से प्रभावित करती हैं।

गोस्वामी तुलसीदास ने अपनी रचनाओं, विशेषकर रामचरितमानस में ऐसे कई प्रसंग और चौपाइयां लिखी हैं जो सार्वभौमिक प्रेम, समानता, और भाईचारे जैसे मानवीय मूल्यों को दर्शाती हैं-

1.सबके प्रति प्रेम और समभाव- सम्पूर्ण संसार को सीता-राम का रूप मानकर, मैं दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ। यह चौपाइयां विश्व बंधुत्व और समानता का सबसे बड़ा संदेश है-

सिय राममय सब जग जानी।
करहुँ प्रणाम जोरि जुग पानी॥

2.परम धर्म और परोपकार- दूसरों का भला करने (परोपकार) के समान कोई दूसरा धर्म नहीं है और दूसरों को कष्ट देने के समान कोई पाप नहीं है।

परहित सरिस धर्म नहिं भाई।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई॥

3.निस्वार्थ और पवित्र हृदय- प्रभु राम कहते हैं कि मुझे केवल निर्मल (पवित्र) मन वाला व्यक्ति ही प्राप्त कर सकता है। मुझे कपट, छल और दूसरों में दोष खोजना पसंद नहीं है।

निर्मल मन जन सो मोहि पावा।
मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥

4 . सबके साथ समानता का व्यवहार- मनुष्य चाहे किसी भी उच्च जाति, कुल या धर्म का हो, उसके पास कितना भी धन और बल क्यों न हो, यदि वह मानवता और ईश्वर के प्रति प्रेम (भक्ति) से हीन है, तो वह उसी प्रकार शोभा नहीं देता जैसे जल के बिना बादल (जो बरस नहीं सकते) व्यर्थ होते हैं।

जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई।
धन बल परिजन गुन चतुराई।
भगति हीन नर सोहइ कैसा।
बिनु जल बारिद देखिअ जैसा॥

इन चौपाइयों के माध्यम से तुलसीदास ने स्पष्ट किया है कि मनुष्य की पहचान उसके बाहरी रूप या जाति से नहीं, बल्कि उसके **कर्म**, **परोपकार** और **निर्मल मन** से होती है।इस तरह की चिंतन समाज मे कभी भी अप्रासंगिक नहीं होते।

कबीर दास 15वीं सदी के एक महान संत, कवि और समाज सुधारक थे। उन्हें एक सच्चा मानवतावादी इसलिए कहा जाता है क्योंकि उन्होंने धर्म, जाति और वर्ग के भेदों से ऊपर उठकर केवल मनुष्य को केंद्र में रखा। उनकी कविता और विचार पूरी मानवता को एक समान मानते हैं। कबीर के साहित्य और विचारों में मानवतावादी दृष्टिकोण को निम्नलिखित उदाहरणों और बिंदुओं से समझा जा सकता है:

1.जाति-पाति और ऊंच-नीच का विरोध: कबीर ने जन्म के आधार पर श्रेष्ठता मानने वालों को कड़ी फटकार लगाई और सभी मनुष्यों को एक ही ईश्वर की संतान माना-

"जाति पाँति पूछै नहिं कोई, हरि को भजै सो हरि का होई।"

2.धार्मिक पाखंडों का खंडन: उन्होंने हिंदू और मुस्लिम दोनों धर्मों में व्याप्त दिखावे, मूर्ति पूजा, रोज़ा-नमाज़ और कर्मकांडों का विरोध किया, उनका मानना था कि सच्चा धर्म मानवता और प्रेम है-

"काँकर पाथर जोरि कै, मस्जिद लई बनाय।
ता चरि मुल्लाँ बांग दे, क्या बहरा हुआ खुदाय॥"

3.आंतरिक प्रेम और ईश्वर का निवास: उनके मानवतावाद में ईश्वर किसी मंदिर या मस्जिद में नहीं, बल्कि हर मनुष्य के हृदय में निवास करता है। इसलिए, किसी भी इंसान को चोट पहुँचाना ईश्वर को चोट पहुँचाने के समान है-

"मोको कहाँ ढूँढ़े बंदे, मैं तो तेरे पास में।"

4.कर्म की महत्ता: कबीर की दृष्टि में महानता ऊंचे कुल या जन्म से नहीं, बल्कि अच्छे कर्मों से आती है।

"ऊँचे कुल का जनमिया, जे करनी ऊँच न होय।
सुबरन कलश सुरा भरा, साधु निंदा सोय।"

इन विचारों के माध्यम से कबीर ने तत्कालीन समाज को संकीर्णताओं से निकालकर सर्व-धर्म समभाव और आपसी भाईचारे का पाठ पढ़ाया।

विमर्श और चर्चा:यह शोध न केवल कबीर और तुलसीदास के साहित्य के अकादमिक महत्व को पुनः स्थापित करता है, बल्कि इसके कई महत्वपूर्ण व्यावहारिक निहितार्थ भी स्पष्ट रूप से सामने लाता है। आधुनिक शिक्षा प्रणाली में मूल्य-आधारित शिक्षा को शामिल करने की नितांत आवश्यकता है, जहां इन दोनों कवियों के विचार एक सशक्त और प्रभावशाली पाठ्यक्रम के रूप में कार्य कर सकते हैं। व्यावहारिक स्तर पर, कबीर के विचारों का उपयोग समाज में व्याप्त अंधविश्वासों, रूढ़ियों और जातिगत भेदभाव के उन्मूलन के लिए चलाए जा रहे राष्ट्रीय अभियानों में किया जा सकता है। वहीं दूसरी ओर, तुलसीदास के समन्वयवादी दृष्टिकोण और रामराज्य की परिकल्पना को सामाजिक सौहार्द, सुशासन और राष्ट्रीय एकता के कार्यक्रमों में सफलतापूर्वक लागू किया जा सकता है।

यद्यपि यह अध्ययन इन महाकवियों के विचारों की उपयोगिता को प्रखरता से रेखांकित करता है, तथापि इस दृष्टिकोण की कुछ सीमाएं और विफलता के मोड भी स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। इन सीमाओं को भली-भांति समझना भविष्य के शोध के लिए अत्यंत आवश्यक है।

पहला, मध्यकालीन अवधी और सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग आधुनिक युवा पीढ़ी के लिए एक बड़ी भाषाई बाधा उत्पन्न करता है, जिससे उन्हें इन ग्रंथों के मूल अर्थ को समझने में अत्यधिक कठिनाई होती है।

दूसरा, इन प्राचीन ग्रंथों के उपदेशों को आधुनिक, जटिल और पूरी तरह से तकनीकी रूप से संचालित समाज की प्रत्येक समस्या पर सीधे तौर पर लागू करना संभव नहीं है।

तीसरा, इन विचारों का चयनात्मक पाठन या निहित स्वार्थों के लिए

गलत व्याख्या समाज में सुधार लाने के बजाय नई भ्रांतियों और गंभीर विवादों को जन्म दे सकती है।

इन व्यावहारिक सीमाओं के साथ-साथ, कुछ अत्यंत महत्वपूर्ण नैतिक विचार और जोखिम भी इस अध्ययन से गहरे रूप से जुड़े हुए हैं। सभी शोधकर्ताओं और समाजशास्त्रियों को इन जोखिमों के प्रति सदैव सतर्क रहना चाहिए।

पहली बड़ी चिंता यह है कि कबीर या तुलसीदास के साहित्य के किसी विशेष अंश को उसके संपूर्ण वैचारिक संदर्भ से काटकर प्रस्तुत करने पर समाज में धार्मिक ध्रुवीकरण या वैचारिक टकराव का भारी खतरा उत्पन्न हो सकता है।

दूसरी गंभीर नैतिक चिंता आधुनिक राजनीतिक विचारधाराओं (जैसे कि आधुनिक नारीवाद या उत्तर-आधुनिकतावाद) के पैमानों को मध्यकालीन ग्रंथों पर जबरन थोपने की प्रवृत्ति से संबंधित है, जो कि साहित्य के प्रति एक ऐतिहासिक अन्याय का कारण बन सकती है।

भविष्य के कार्य के लिए यह विस्तृत अध्ययन कई नए द्वार और शोध की नवीन दिशाएं खोलता है। आने वाले समय में विद्वान इस मूल विषय को और अधिक विस्तार तथा गहराई दे सकते हैं।

भविष्य के शोधकर्ता कबीर और तुलसीदास के विचारों का विस्तृत तुलनात्मक अध्ययन वैश्विक दार्शनिकों (जैसे कि यूनानी विचारक सुकरात या आधुनिक विचारक कार्ल मार्क्स) के साथ कर सकते हैं, जिससे इन भारतीय विचारकों की सार्वभौमिकता और अधिक स्पष्ट हो सकेगी।

इसके अतिरिक्त, एक व्यापक अनुभवजन्य अध्ययन किया जा सकता है, जिसमें मनोवैज्ञानिक उपकरणों के माध्यम से यह मापा जाए कि क्या वास्तव में इन कवियों के साहित्य का नियमित अध्ययन आधुनिक कार्यस्थलों या शिक्षण संस्थानों में लोगों के नैतिक व्यवहार को उन्नत करता है।

निष्कर्ष:समग्र रूप से इस शोध पत्र ने यह अकाट्य रूप से स्पष्ट किया है कि संत कबीर और महाकवि तुलसीदास केवल अपने समय के महान रचनाकार मात्र नहीं थे, बल्कि वे ऐसे अप्रतिम युगदृष्टा थे जिनके विचार काल और स्थान की सीमाओं को लांघकर आज भी पूरी तरह प्रासंगिक हैं। कबीर का निर्भीक और आलोचनात्मक दृष्टिकोण हमें समाज की छिपी हुई बुराइयों को पहचानने और उन्हें बिना किसी भय के जड़ से उखाड़ फेंकने का नैतिक साहस प्रदान करता है। इसके ठीक विपरीत, तुलसीदास का समन्वयवाद और मर्यादा-पुरुषोत्तम राम का लोकमंगलकारी आदर्श हमें एक ऐसा सकारात्मक ढांचा देता है जो समाज में रचनात्मकता, भाइचारा और उच्च नैतिक मूल्यों की पुनः स्थापना करता है। वर्तमान समय की उथल-पुथल, वैचारिक भटकाव और मूल्य-हीनता के इस कठिन दौर में ये दोनों दृष्टिकोण परस्पर विरोधी न होकर एक-दूसरे के बेहतरीन पूरक सिद्ध होते हैं।

आधुनिक युग की अभूतपूर्व जटिलताओं का स्थायी समाधान किसी एक एकांगी या चरम विचारधारा में कदापि निहित नहीं है, बल्कि इसके लिए कबीर की 'विद्रोही चेतना' और तुलसी की 'समन्वयवादी दृष्टि' के संतुलित एवं विवेकपूर्ण प्रयोग की नितांत आवश्यकता है। अंततः, इस अध्ययन के आधार पर यह ठोस निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि जब तक मानव समाज में असमानता, अन्याय, धार्मिक कट्टरता और नैतिक पतन जैसी गंभीर समस्याएं विद्यमान रहेंगी, तब तक संत कबीर का सचेतक स्वर और गोस्वामी तुलसीदास का लोकमंगलकारी संदेश भटकी हुई मानवता का सदैव मार्गदर्शन करता रहेगा। आधुनिक पीढ़ी के लिए इन महान विचारों का अध्ययन करना मात्र एक अकादमिक या साहित्यिक औपचारिकता नहीं है, बल्कि यह एक स्वस्थ, सशक्त और सच्चे अर्थों में मानवीय समाज के निर्माण के लिए आज की सबसे बड़ी अनिवार्यता है।

संदर्भ सूची:

1. कबीर. (सं.). **बीजक**. इलाहाबाद: कबीरपंथी प्रकाशन.
2. कबीर. **कबीर ग्रंथावली**. संपा. डॉ. श्यामसुन्दर दास. प्रयाग: इंडियन प्रेस.
3. तुलसीदास, गोस्वामी. **रामचरितमानस**. गोरखपुर: गीता प्रेस.
4. तुलसीदास, गोस्वामी. **विनय पत्रिका**. गोरखपुर: गीता प्रेस.
5. द्विवेदी, हज़ारीप्रसाद. (2017). **कबीर**. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
6. द्विवेदी, हज़ारीप्रसाद. (2018). **हिंदी साहित्य की भूमिका**. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
7. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र. (2019). **हिंदी साहित्य का इतिहास**. नई दिल्ली: लोकभारती प्रकाशन.
8. वर्मा, रामकुमार. (2016). **हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास**. प्रयागराज: लोकभारती प्रकाशन.
9. चतुर्वेदी, परशुराम. (2015). **कबीर साहित्य की परख**. वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन.
10. मिश्र, शिवकुमार. (2014). **भक्ति आंदोलन और हिंदी साहित्य**. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन.
11. सिंह, नामवर. (2016). **इतिहास और आलोचना**. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
12. पाण्डेय, मैनेजर. (2013). **साहित्य और इतिहास दृष्टि**. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन.
13. शर्मा, रामविलास. (2012). **भारतीय साहित्य की भूमिका**. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
14. सिंह, बच्चन. (2010). **हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास**. नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन.